समय के निकष पर

हिन्दी सिनेमा

सम्पादक

सीमा शर्मा

© डॉ. सीमा शर्मा

ISBN : 978-93-88011-91-4

प्रकाशक
साहित्य संचय
बी-1050, गली नं. 14, पहला पुस्ता,
सोनिया विहार, दिल्ली-110090
फोन नं. : 09871418244, 09136175560
ई-मेल - sahityasanchay@gmail.com
वेबसाइट - www.sahityasanchay.com

ब्रांच ऑफिस
ग्राम : बहुरार, पोस्ट : ददरी
थाना : नानपुर, जिला : सीतामढ़ी
पटना (बिहार)

नेपाल ऑफिस
राम निकुंज, पुतलीसड़क
काठमांडौ, नेपाल-44600
फोन नं. : 00977 9841205824

प्रथम संस्करण : 2019
कवर डिजाइन : प्रदीप कुमार

मूल्य : ₹ 350/- (भारत, नेपाल)
मूल्य : $ 10 (अन्य देश)

Samay Ke Nikash Par Hindi Cinema
Edited by Seema Sharma

साहित्य संचय, बी-1050, गली नं. 14, पहला पुस्ता, सोनिया विहार, दिल्ली-110090 से **मनोज कुमार** द्वारा प्रकाशित तथा **श्रीबालाजी ऑफसेट**, दिल्ली द्वारा मुद्रित।

सामाजिक समस्या प्रधान सिनेमा

डॉ. लोकेश कुमार गुप्ता
सहायक प्रोफेसर (हिंदी विभाग)
माता सुंदरी महिला महाविद्यालय, नई दिल्ली-02
Email ID: lokeshjnu@gmail.com

वेदनाभाव ही साहित्य की शुरुआती दौर में प्राथमिक रहा। इसीलिए क्रौंचवध कविता को आदिकविता के रूप में माना जाता है। क्रौंच वध को एक जिक संवेदना और समस्या के रूप में रचा गया है। तदनंतर अभिव्यक्ति की समस्त विधाओं में वेदना को कहीं प्रमुखता तो कहीं गौणता प्रदान करते हुए, एँ पल्लवित हुईं। विधाएँ चाहें वे अधुनातन काल की हों या अर्वाचीन काल की, ब साहित्य में मनुष्य की मनोदशाओं को अभिव्यक्त करने में सक्षम रहीं। वर्तमान स्थितियों में साहित्य को जनसामान्य तक पहुँचाने का कार्य करती सिनेमा विधा त ही लोकप्रिय है। सिनेमा में जनसंपृक्ति के अदभुत प्रयास हैं। प्रयास है फलतापूर्वक विषय के साथ सकारात्मक संवाद स्थापित करने का। सिनेमा अपनी कास-यात्रा में बहुत ही जीवंत विधा रही है। इस संदर्भ में यूनुस खान व्यक्त करते कि, "सिनेमा को मनुष्य की विकास-यात्रा का एक जीवंत दस्तावेज कहा जाता है।"[1] सिनेमा मनुष्य की जीवंत यात्रा के दस्तावेज के रूप में देखा गया इसीलिए यूरोप और अमेरिका में सत्य साहित्य के प्रचार और प्रसार में सिनेमा द्वारा प्रस्तुत छवियों को प्रशंसनीय माना गया। शेक्सपियर, बर्नार्ड शॉ, जोला, मेटरलिंक, टालस्टाय, पुश्किन, सिन्क्लेयर, हैमिंग्वे आदि की कृतियों को सर्वसाधारण के लिए उपस्थित कर सिनेमाई आदर्श में प्रस्तुत किए।

अंतरराष्ट्रीय सिनेमा, राष्ट्रीय सिनेमा, क्षेत्रीय सिनेमा, टेलीफिल्म हो या फिर डॉक्यूमेंटरी पटकथा सभी में किसी-न-किसी प्रकार की समस्या अवश्य होती है। किसी में सामाजिक समस्या होती है तो किसी में राजनीतिक। पारिवारिक समस्याएँ लक्षित होती हैं तो कहीं जातीय वैमनस्य की भावना का प्रदर्शन। कहीं प्रेम तो कहीं देशप्रेम के विविध पक्ष उपस्थित करता सिनेमा है तो कहीं पर भ्रष्टाचार तथा जमींदारी

प्रथा तो कहीं स्त्री और पुरुष के भिन्न-भिन्न संदर्भ सिनेमा में उपस्थित किए गए है। धार्मिक आस्थाएँ और अंधविश्वास दोनों का वर्णन भी सिनेमाई समस्याओं में उपस्थित है।

ये बिल्कुल ठीक है कि अधिकांश जन सिनेमा को मनोरंजन के साधन के रूप में ही देखते हैं। इसी कारण संभवतः बैंडिट क्वीन सदृश सिनेमा को देखने अपार जनसमूह सिनेमाघरों की खिड़कियों पर खड़ा था। लेकिन सिनेमाई मनोरंजन कहीं धीरे से सामाजिक विरेचन और दिग्भ्रमित को भी दिशा प्रदान करने का काम करता है। व्यक्ति की आसक्तियों तथा अनासक्तियों को दूर करने का प्रयास मनोरंजन के सिनेमा के माध्यम से भी किया जाता है। यहाँ मैं एक साइलेंट मुवी पुष्पक का अवश्य जिक्र करना चाहूँगा। पुष्पक अपने समय का बहुत ही मार्मिक सिनेमा है। पुष्पक में अपने ज़माने की बेकारी, बेगारी और आज़ाद हिंदुस्तान की अनेक समस्याओं को बड़े ही व्यंग्य और हास्यास्पद अभिनय के साथ अभिनीत किया गया है।

इसी प्रकार चार्ली चैपलिन के द्वारा लिखित और निर्देशित फिल्म है मॉडर्न टाइम्स 1936। इस सिनेमा में हास्य और व्यंग्य के अभिनय के द्वारा बखूबी औद्योगिक क्रांति के कारण मानवीय जीवन के बदलावों और उपेक्षित होती मानवता, भाईचारा, बंधुत्व को दिखाने का प्रयास किया है। नैतिकताओं के बरक्स नैतिकताओं के निर्माण और पतन को उल्लिखित करता हुआ सिनेमा है। इस संदर्भ में बर्नार्ड शॉ व्यक्त करते हैं, "सिनेमा द्वारा दीक्षित नैतिकता का प्रश्न असाधारण महत्त्व का है। सिनेमा देश के दिमाग को आकार देगा। देश की चेतना, देश के आदर्श और आचरण की कसौटी वही होगी जो सिनेमा की होगी। सिनेमा की नैतिकता का प्रश्न जिस तरह से सुलझाया जा रहा है वह हमारे सार्वजनिक जीवन के तौर-तरीकों की तरह है। कुछ लोग जो कभी सिनेमाघर के भीतर नहीं घुसे वे सिनेमा की विकराल अनैतिकता से चिंतित हैं, सेंसर व्यवस्था के पक्षधर हैं और सोलह वर्ष से कम उम्र के बच्चों के लिए मनाही की माँग कर रहे हैं। कुछ अन्य, जो मेरी तरह सिनेमा के शौकीन हैं वे फिल्मों के एकाकी रूमानी नैतिकता की गवाही देते हैं तथा दूसरी ओर अहस्तक्षेप की नीति के मध्य किसी भी समझदारी की उम्मीद नहीं की जा सकती।"

वर्तमान हॉलीवुड, बॉलीवुड, टॉलीवुड सिने जगत में अनेक फिल्म इस प्रकार की है जहाँ हम विविध समस्याओं से रूबरू हो सकते हैं। इस संदर्भ में प्रथम गर्म हवा का जिक्र अवश्य होना चाहिए। हिंदुस्तान और पाकिस्तान के विभाजन को प्रस्तुत करता गर्म हवा सिनेमा अपने समय की भिन्न नैतिकताओं से टकराता है। विरासत और विनाश दोनों का भरपूर प्रदर्शन है। स्मृतियों के झरोखे हैं तो सांप्रदायिक लपटों में झुलसा समाज भी। सौहार्द्रता के नम छींटे भी हैं तो सियासी अलगाव की आग का विधान विचार भी।

भारत-पाक विभाजन तथा फासीवादी ताकतों को समाज में बिंबित करती तमस उल्लेखनीय पटकथा है। इसी संदर्भ में पिंजर तथा गदर : एक प्रेम कथा को भी समझा जा सकता है। लगान भारतीय औपनिवेशिक समाज की गुलाम मानसिकता और पराधीनता से मुक्ति के प्रयास की सिनेमाई बुनावट है। भारतीय समाज की अनेक कुरीतियों को जातीय समाज में खोजा जा सकता है।

जैसे ही समाज किसी नवीन परंपराओं और आविष्कारों तथा विकासों की ओर बढ़ता है तो पुरातन सभ्यताएँ तथा सामाजिक दकियानूसीपन उस प्रयास को अवरुद्ध करने का प्रयास करता है लेकिन जैसे ही सामाजिक स्वीकृति मिलने लगती है वह पुरातन विचार अपने अस्तित्व से मूलभूत रूप में परिवर्तित होने लगता है। प्रकृति की स्वस्थ रिवायत भी यही है किंतु प्रकृति अपने अवरोधों को स्वयं समय और पर्यावरण के अनुसार हाशिये पर पहुँचा देती है। समाज में वैयक्तिक अवरोधों के प्रस्थान को विराम देने से पूर्व अनेकषः हिंसा और हत्याओं के दौर से प्रत्यक्ष होते हैं अथवा संवैधानिक नियमों और संस्थाओं का सहारा लेकर उसको व्यक्त करने तथा समाज में व्यवस्थित रूप से सुचारू करने के लिए प्रयत्न करने पड़ते हैं। भारतीय और अन्य सिनेमा में इस प्रकार की समस्याओं के निदर्शन अनेक प्रत्यक्ष हैं। हमें नज़र मात्र उस ओर लेकर जाने की है। पद्मावत, जोधा अकबर, नानकशाह फकीर, वाटर और फायर आदि इस कड़ी में समझी जा सकती है। ऐसा नहीं है कि इस प्रकार के माहौल का निर्माण मात्र हिंदुस्तान की सीमाओं में होता है बल्कि अंतरराष्ट्रीय जगत के अनेक सिनेमा जो रोम, जर्मनी, रशिया और चर्च तथा सत्ताई समाज की हकीकत से रू-ब-रू कराने की कोशिश करता है; उनको सामाजिक-सांस्कृतिक-राजनीतिक दबावों को अनुभव करना ही होता है। यदि हम मोस्ट कंट्रोवर्सियल मूवीज का जिक्र करें तो वैश्विक स्तर पर रोम साम्राज्य पर निर्मित केलिगुला को स्मृत करते हैं तथा जर्मन फिल्म मेलिना की करुण कातरता से संवाद करते हैं। युद्धों की विभीषिकाओं में डूबती ममता, मानवता, प्रेम की कहानी है तो अत्याचारियों के दमन से मरती इच्छाओं, आकांक्षाओं और अभिलाषाओं को भी व्यक्त किया गया है। युद्ध होते हैं, साम्राज्यों का विस्तार होता है सैनिक मारे जाते हैं और स्त्रियाँ पशुवतों के समक्ष अपना अस्तित्व धूमिल कर रही होती है।

सामाजिक-सांस्कृतिक विमर्शों को प्रस्तुत करता सिनेमा बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। पी के, ओ माई गॉड आदि व्यवस्था में बढ़ रहे ढकोसलों, अंधविश्वास, रूढ़ियों तथा अंधश्रद्धा पर सवाल खड़ी करती पटकथाएँ हैं।

पाथेर पांचाली पारिवारिक अंतर्वैयक्तिक संबंधों की दास्तान है। सामाजिक परिवर्तन जीवन-मृत्यु, विनाश-विकास अवशेष की प्रक्रिया से जूझते परिवार की अनकही व्यथाओं की सिनेमाटोग्राफी है। फोटोग्राफिक यथार्थ को बहुत ही सत्यता

के साथ सिनेमा में उतारा गया है। संवेदना और भावना पक्ष सिनेमा में स्थान है। क्षेत्रीय बांग्ला सिनेमा होने के बाद भी राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान भी बनाता है और भारतीय समाज के मानवीय संदर्भों को उपस्थित भी करता है। बल्कि मानवीयता के बखान और प्रदर्शन से सिनेमा वैश्विक समाज की प्रस्तुति करता है।

1905 में ओड़ीसा में नौसैनिक विद्रोह की कहानी को सिनेमा में प्रस्तुत करती द बैटलशिप पोटकमिन विश्व सिनेमा के इतिहास में पहली प्रामाणिक कृति के रूप में पहचान बनाती है। कलाकृति कहने के पीछे का उद्‌देश्य मात्र इतना है कि उसमें टेक्नोलोजी, ढाँचा और विषयवस्तु तीनों मिलकर एक सुंदर डिजाइन को तैयार करते हैं। तानाशाही समाज में प्रतिरोध के सुर और स्वरों की आंतरिक गतिशीलता के चिंतन को प्रस्तुत किया है। किस प्रकार एक व्यक्ति का विरोध समूह के विरोध स्वरों में पल्लवित होता है और वैश्विक समाज में परिवर्तन का कारण बनता है। संभवतः द बैटनशिप पोटकमिन सिनेमा प्रस्तुत करता है।

1958 फ्रांस में निर्मित सिनेमा हिरोशिमा, मोन अमूर 1945 में हिरोशिमा की तबाही की स्मृति को उपस्थित करती है। यह किसी प्रेम वृत्तांत की तरह है। वैश्विक ट्रैजेड़ी में खोए हुए प्रेम की यादों के सिलसिले का बयान करती है। द नाइट पैट्रोल बेहद गरीब और बेघर लोगों की जिंदगी पर निर्मित फिल्म थी जो लंदन के फुटपाथों पर दिन काटते हैं। जो इस भ्रम में लंदन शहर की ओर आ जाते हैं कि वहाँ पर रोजगार का प्रबंध हो जाएगा। एडिथ कैवेल की फिल्म मानवता पर युद्ध की भयावहता को असाधारण प्रकार से प्रदर्शित करती फिल्म है।

प्राक्-द्वितीय विश्वयुद्ध काल के हॉलीवुड की परंपरा ने हमें पैस्चर, द गुड अर्थ, वुदरिंग हाइट्स और चैपलिन की महान फिल्में दी हैं। अपने समय का अतिक्रमण करती फिल्में जो अपने कालजयी मूल्यों और सतत सामाजिक समस्याओं के लिए जानी जाती हैं उनमें इनटॉलरेंस, डी. डब्ल्यू. ग्रिफिथ 1916, द कैबिनेट ऑफ डॉ. कैलिगरी, रॉबर्ट वेन, 1919 आदि प्रमुख फिल्में हैं।

वर्गीय और जातीय संघर्षो से रू-ब-रू कराते सिनेमा का जिक्र अवश्य होना चाहिए। हमें यह अवश्य जानना चाहिए कि भारत एक जाति प्रधान देश है वर्ग प्रधान नहीं। किसान-जमींदार, किसान-महाजन, मालिक-दास संबंधों को व्यक्त करते चलचित्रों का आंशिक वर्णन आवश्यक हो जाता है। मदर इंडिया, दो बीघा जमीन तथा 1970 के दसक में अमिताभ बच्चन अभिनीत अनेक ऐसी फिल्में थीं जो मालिक मजदूर संघर्ष को धरातल पर उतारती हैं। भारतीय समाज और राजनीति पर प्रकाश झा निर्देशित राजनीति अनुपम फिल्म है। यह समाज और राजनीति में दलित, अल्पसंख्यक, पिछड़ा तथा स्त्री के भिन्न संदर्भो को रचती है। तारे ज़मीन पर, ब्लैक, दोस्ती समाज के भिन्न परिप्रेक्ष्य की फिल्में हैं। श्याम बेनेगल प्रतिबद्ध निर्देशक हैं

जो जनसमस्याओं को अपने निर्देशन का विषय बनाते हैं। वे उपेक्षित हुए लेकिन एक स्थापित निर्देशक है।

श्याम बेनेगल निर्देशित अंकुर, वेलकम टू सज्जनपुर भारतीय समाज के ऐसे अनेक परिदृश्यों को प्रस्तुत करती है जो आज के समाज में उपेक्षित हैं लेकिन अस्मिताई परिवर्तन के लिए कसमसा रहे हैं। इसके अलावा मंडी, आस्था, वाटर, फायर, डोर, ट्रैफिक सिग्नल, सलाम बांबे, माचिस, पेजथ्री, लाइफ इन मेटरो, पिंक, बागवां परिवार, समाज, संस्कृति तथा वर्तमान परिदृश्यों में व्याप्त भिन्न समस्याओं को समाज पटल पर रखती है। सामाजिक सुधार को प्रदर्शित करती अछूत कन्या, सुजाता आदि फिल्मों ने समाज के समक्ष एक संवेदनशील तस्वीर प्रस्तुत की है। लोकप्रियता और सिक्कों की झंकार की आकांक्षा ने सामाजिक समस्या प्रदान सिनेमा की प्रस्तुतियों में बाधा उत्पन्न की है। सिनेमा में से समाज और समय दोनों दूर होते रहे। मुल्कराज आनंद के शब्दों में "आर्ट फिल्में' वस्तुतः एक प्रतिवाद थीं– व्यावसायिक विकृति के खिलाफ। बुद्धिजीवियों ने इस नए शस्त्र का प्रगति और प्रतिक्रिया की लड़ाई में जमकर प्रयोग किया और यह वस्तुतः बाजारू मनोवृत्ति के खिलाफ कलात्मक सृजन की एक जंग में तब्दील हो गई।"[2]

संदर्भ

1. वर्तमान साहित्य, सदी का सिनेमा, संपादक-मृत्युंजय, पेज न. 22, अगस्त-दिसंबर-2002, शिल्पायन, दिल्ली।
2. वर्तमान साहित्य, सदी का सिनेमा, संपादक-मृत्युंजय, पेज न. 10, अगस्त-दिसंबर-2002

अनुक्रम

सम्पादकीय 5

1. बॉलीवुड, वास्तविकता, काल्पनिक और इतिहास 13
डॉ. स्मिता मित्रा

2. नारी अस्मिता की परिधि पर हिंदी सिनेमा 19
डॉ. सीमा शर्मा

3. सिनेमा में तकनीक के अनुप्रयोग का वैश्विक संदर्भ 26
राहुल प्रसाद

4. नारी-मन का अद्‌भुत विश्लेषण 'यही सच है' 35
डॉ. आशा रानी

5. वर्तमान फिल्मों में स्त्री सशक्तिकरण का स्वरूप 42
डॉ. मंजू शर्मा

6. स्त्री केंद्रित वर्तमान हिंदी सिनेमा 44
सालिम मियाँ

7. भारत में सामाजिक मुद्दों के प्रति स्टैंड-अप कॉमेडी का प्रभाव 51
नीरज कुमार शर्मा

8. हिंदी सिनेमा और लोक-रंगमंच : भाव एवं अनुभव 59
सुदेश

9. कला विधा के रूप में हिंदी सिनेमा 67
मुकेश कुमार

10. हिंदी सिनेमा वर्तमान संदर्भ में 70
डॉ. बसुन्धरा उपाध्याय

11. हिंदी सिनेमा का इतिहास और कल्पना 75
उजाला चोपड़ा

12. नारी सशक्तिकरण में भारतीय सिनेमा का योगदान 79
स्वाति ठाकुर

13. नारी सशक्तिकरण और हिंदी सिनेमा 82
ऐश्वर्या टंडन

14. हिंदी सिनेमा में स्त्रियों की स्थिति 85

गाजिया अंसारी

15. हिन्दी : भारतीय सिनेमा के 100 वर्ष 90

अदिति

16. हिंदी सिनेमा : एक विमर्श 95

सुरजीत बिहारी

17. वर्तमान फिल्मों में स्त्री सशक्तिकरण का स्वरूप 102

डॉ. मंजू शर्मा

18. कला विधा के रूप में हिंदी सिनेमा 104

मुकेश कुमार

19. इक्कीसवीं सदी की हिंदी फिल्मों में व्यक्त स्त्री प्रतिरोध 107

अरुणा त्रिपाठी

20. हिंदी सिनेमा के विभिन्न पड़ाव 112

डॉ. अंजु

21. नारी सशक्तिकरण और हिंदी सिनेमा 119

डॉ. डिंपल गुप्ता

22. हिंदी सिनेमा और अभिनय सम्राट दिलीप कुमार 124

डॉ. आसिफ़ सईद

23. हिंदी सिनेमा में नारी-चेतना 126

डॉ. सुनीता

24. हिंदी सिनेमा में लघु फिल्में, वृत्तचित्र, विज्ञापन फिल्में 130

डॉ. कैलाशी मीना

25. हिंदी सिनेमा में अभिव्यक्त ग्रामीण संस्कृति 134

डॉ. संध्या वात्स्यायन

26. हिंदी सिनेमा और समाज 141

सुमिता त्रिपाठी

27. हिंदी फिल्मों की भाषा 147

कपिल देव

28. सामाजिक समस्या प्रधान सिनेमा 149

डॉ. लोकेश कुमार गुप्ता

29. हिंदी सिनेमा में अभिव्यक्त प्रेम का स्वरूप 154

सिमरन

30. बिमल रॉय की फिल्मों में स्त्री की दुनिया (परिणीता, सुजाता तथा बंदिनी के विशेष संदर्भ में)
आशीष कुमार 166
31. पर्यावरण संरक्षण में सिनेमा की भूमिका
प्रोफेसर (डॉ.) सुरेंद्र कुमार यादव 168
32. साहित्य की उत्कृष्ट सिनेमाई अभिव्यक्ति 'तीसरी कसम'
सतीश कुमार भारद्वाज 170
33. हिंदी सिनेमा का नारी पर प्रभाव
दिव्या पवार 176
34. हिंदी सिनेमा का विकास
सुरभि बंसल 183
35. फिल्मों में हिंदी का सफर
डॉ. संगीता वर्मा 190
36. बॉलीवुड की राजनीतिक फिल्मों और फिल्म सितारों की प्रभावशीलता का विश्लेषण
प्रवीण कुमार 194
37. समाज को एक नई सोच देता पैडमैन
डॉ. साधना अग्रवाल 206
38. नारी सशक्तिकरण और हिंदी सिनेमा
डॉ. सविलता यादव 208
39. भिखारी ठाकुर के संदर्भ में सिनेमा का लोकरंग
सुमन 214
40. व्यावसायिक सिनेमा और कला सिनेमा
डॉ. मधु कौशिक 217
41. सिनेस्तान इंडियाज स्टोरीटेलर्स
प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी 220
42. हिंदी सिनेमा का बदलता मिजाज
साक्षी मोंगा 223
43. हिंदी सिनेमा और अभिनय में परिवर्तन
डॉ. राहुल उठवाल 226
44. सिनेमा : चलती हुई तस्वीरों और सपनों का कारखाना
डॉ. मनोज कुमार सतीजा 232
45. हिंदी सिनेमा का वैश्विक संदर्भ
डॉ. राजेश कुमार शर्मा 235